आई एस आई एस और भारत पर प्रभाव

सीरिया मे आई एस आई एस की बढती चरम पंथी आतंकवादी घटनाओ ने सारे विश्व के राजनैतिक समीकरण को बदल कर रख दिया है। कुछ लोग विश्वयुद्ध की आशंका व्यक्त करने लगे है तो कुछ लोग इस्लाम के समक्ष अभूतपूर्व संकट की भविष्यवाणी करने लगे है । कुछ लोग ऐसा भी मानने लगे है कि पहली बार अमेरिका की कूटनीति संकट मे आयी है। इस घटना क्रम से दुनियां पर क्या प्रभाव पडेगा और उॅट किस करवट बैठेगा इस संबंध मे कोई अनुमान लगाना बहुत जल्दबाजी होगी, क्योकि अनुमान लगाना कोई आसान काम नहीं है। किन्तु इस विश्व व्यापी घटना का भारत पर क्या प्रभाव पडेगा यह अनुमान लगाना कठिन नहीं।

नरेन्द्र मोदी के आने के बाद भारत की राजनैतिक आर्थिक और साम्प्रदायिक स्थितियों मे निर्णायक बदलाव हुआ है । नरेन्द्र मोदी के पूर्व आर्थिक स्थिति सामान्य तरीके से चल रही थी। राजनैतिक स्थिति परिवार के तुष्टीकरण तक केन्द्रित थी तथा साम्प्रदायिक स्थिति इस्लाम के पक्ष मे एक पक्षीय झुकी हुई थी। आमतौर पर परिवार वाद और मुस्लिम तुष्टीकरण के बीच एक अलिखित गठजोड था जो सम्पूर्ण शासन व्यवस्था पर हावी था। संघ परिवार इस पूरे राजनैतिक घटनाक्रम को बदलकर हिन्दू सम्प्रदाय के पक्ष मे ध्रुवीकृत करना चाहता था। तो दूसरी ओर नरेन्द्र मोदी इसे आर्थिक प्रगति की दिशा मे ले जाना चाहते थे। दोनो के गठजोड से चुनाव हुए और गठजोड की सरकार बन गई । परिवार वाद की राजनीति और मुस्लिम तुष्टीकरण के समझौते के अंतर्गत चल रही केन्द्र सरकार पराजित हुई। नरेन्द्र मोदी ने अपने आर्थिक प्रगति के मुद्दे को तेजी से आगे बढाना शुरू किया जो संघ परिवार के लिये हिन्दू तुष्टीकरण के विरूद्ध दिखा और परिणाम हुआ कि दोनो के बीच अप्रत्यक्ष खींचतान शुरू हुई । इस खींचतान का लाभ उठाकर राजनैतिक परिवारवाद तथा मुस्लिम तुष्टीकरण के गठजोड को कुछ आशाए बंधी और वे फिर से मैदान मे एक जुट होकर चुनौती देने की स्थिति मे आ गये। सौभाग्य से उन्हे नीतिश कुमार सरीखा एक नरेन्द्र मोदी से भी अधिक योग्य व्यक्ति का नेतृत्व मिल गया। परिणाम स्वरूप परिवारवाद और मुस्लिम तुष्टीकरण मिलकर फिर से अपने भविष्य के लिये संघर्ष प्रारंभ कर दिये।

ऐसे ही कठिन समय मे आई एस आई एस के खतरे का उदय हुआ और स्वाभाविक रूप से भारत की राजनैतिक स्थिति पर भी प्रभाव पडना शुरू हुआ। रूस में जो आतंकवादी हत्याएं हुईं वे तो गुमनाम सी रहीं किन्तु फ्रांस की घटनाओं ने व्यापक प्रभाव डाला । फ्रांस की घटनाओं के पूर्व भी भारत के कुछ मुसलमान आई एस आई एस की आतंकवादी घटनाओं के विरूद्ध थे। लगभग एक डेढ वर्ष पूर्व रामलीला मैदान में लाखों मुसलमानों ने इकठ्ठा होकर आतंकवाद को गैर इस्लामी कार्य घोंषित किया था। किन्तु उस समय यह घोषणा विश्व स्तरीय चर्चा मे तो आई ही नहीं, बल्कि भारत मे भी करीब करीब गुमनाम ही रही। किन्तु फांस की घटना के बाद मुसलमानो के एक संगठन के नेतृत्व मे भारतके 85 शहरो मे आतंकवाद विरोधी छोटे बडे प्रदर्शन हुए और इन प्रदर्शनों ने अनेक संगठनो को चिंता मे डाल दिया । संघ परिवार इस प्रदर्शन को देखकर इस बात से बहुत चिंतित हुआ कि फ्रांस की घटना के आधार पर आम मुसलमानों को कटघरे मे खडा किया जा सकता था किन्तु इस प्रदर्शन से उस कटघरे का दरवाजा अपने आप खुल गया है । अर्थात इसका अर्थ हुआ कि हिन्दू और मुसलमान को दो समूहो मे ध्रुवीकृत करना कठिन हो गया है। इसके बाद अब आम मुसलमानो पर आतंकवाद प्रेमी अथवा राष्ट्र विरोधी सोच होने का ठप्पा लगाने मे दिक्कत होगी दुसरी ओर मुस्लिम तुष्टीकरण को आधार बनाकर राजनीति करने वाले मोदी विरोधी राजनैतिक दल भी एकाएक संकट मे आ गये। वे भारत मे इस्लाम खतरे में का नारा लगाकर राजनैतिक रोटी सेकने मे कठिनाई महसूस करने लगे है। दो तीन दिनो से टी वी मे आ रही चर्चाए दोनो की कठिनाइयो को स्पष्ट कर रही है। संघ समर्थित साक्षी महाराजा अथवा गेरूआ वस्त्र धारी अनेक साध्वियो के मुंह पर तो अभी ताला बंद दिख रहा है। किन्तु विपक्षी दलों के लोग तो बिल्कुल सामने आकर अपनी पीडा व्यक्त कर रहे हैं । आजम खान लगातार एडी से चोटी तक जोर लगाए हुए है कि मुसलमान विभाजित न हो और या तो चुप रहे अथवा अमेरिका को गाली देने तक स्वयं को सीमित कर ले। कांग्रेस के प्रवक्ता शकील अहमद या मणिशंकर अययर ने भी इस घटना मे हस्तक्षेप करते हुए बहुत नीचे स्तर का बयान दिया । अभी अन्य भी लोगो के बयान आ रहे है जो अपनी छटपटाहट व्यक्त कर रहे हैं। अभी लालू प्रसाद तो बिहार की चिंता मे लगे हुए है और दिग्विजय सिंह जी भी कुछ न कुछ बोलने की सोच रहे हे। मै स्पष्ट हूॅ कि लालू प्रसाद दिग्विजय सिंह आजम खान शरीखे लोग अपूर्वानंद सरीखे कुछ साहित्य कारो के साथ मिलकर फ्रांस के घटनाक्रम पर अवश्य ही एक शोध पत्र प्रकाशित करेंगे । जिसके अनुसार फ्रांस की सरकार ने वहां जिन लोगों को आतंकवादी कहकर मारा था या जिन्हें गिरफतार किया वे सब के सब मुसलमान थे। फ्रांस मे मुसलमानो की आबादी का प्रतिशत बहुत कम है और उसके बाद भी आतंकवादी कहकर मारने या गिरफतार

करने मे एक ही सम्प्रदाय के लोगो को शामिल करने के पीछे कहीं फांस का भी ऐसा तो स्वभाव नहीं बन गया जिनपर मोदी का प्रभाव पड गया है। मै जानता हूँ कि यदि ऐसी घटना भारत में होती तो न्यायमूर्ति सच्चर समेत अनेक लोग इसे आबादी के अनुपात मे अत्याचार मानकर अबतक शोधपत्र प्रकाशित कर देते। सच्चाई तो यह है कि यदि किसी स्थापित व्यवस्था मे किसी एक वर्ग की आवादी की तुलना मे आबादी से कई गुना अधिक प्रतिशत लोग अपराधो मे संलिप्त पाये जाते है तो उस वर्ग विशेष के लिये शर्म का विषय है, चिंता का विषय हैं सुधार कर विषय हैं, शोध का नही , प्रश्न करने का नही । भारत के मुसलमान ऐसा कर भी सकते है, यदि संघ परिवार और वोट बैक पर निर्भर विपक्षी दल उन्हे ऐसा करने का अवसर दें। वर्तमान मे कुछ मुसलमानो ने जो प्रयत्न किया है, उस प्रयत्न ने संघ परिवार और अल्पसंख्यक मतो पर निर्भर विपक्षी राजनेताओ को सक्ते मे डाल दिया है। अब भी समय है कि विश्व घटना क्रम के परिप्रेक्ष्य मे हमारे देश के नेता और साम्प्रदायिक हिन्दू कुछ समय के लिये दुनिया की सोच से तालमेल करने का प्रयास करें।

पेरिस की घटना कितनी क्रिया कितनी प्रतिक्रिया

फ्रांस के पेरिस में आतंकवादी आई. एस. के आत्मघातियों ने आक्रमण करके सैकडों निर्दोषों की हत्या कर दी, तथा कई सौ को घायल कर दिया। पूरी दुनिया में लगभग एक स्वर से निंदा हुई। दुनिया के अधिकांश मुस्लिम देशों ने भी घटना की निंदा की। कुछ मुसलमानों ने यदि निंदा नही भी की तो वे चुप रहे। भारत अकेला ऐसा देश रहा,जिसके दो स्थापित लोगों ने इस घटना के संबंध में कुछ विपरीत मुँह खोला। मैं जानता हूँ कि ऐसे मुँह खोलने वाले आजमखान और मणिशंकर अय्यर ने न तो कुछ सोच समझकर कहा और न ही परिणामों की चिंता की। जिस तरह हमेशा से कुछ नया बोलकर और वह भी कट्टरवादी मुसलमानों के पक्ष में बोलकर सुर्खिया बटोरने की आदत थी, इस बुरी आदत के चक्रव्युह में दोनों बेचारे फंस गये। अब अफसोस तो हो रहा है किन्तु आदत तो आदत होती है। 99 बार फायदा देती है तो एक बार सूदव्याज समेत वसूल कर लेती है। मुझे तो शर्म आती है इन दोनों को पढ़ा लिखा या राजनेता कहने पर। पता नही सोनिया और मुलायम ऐसे ऐसे ना समझों को क्यों मुँह लगाये रहते हैं।

कौन सा कार्य क्रिया है और कौन सा प्रतिक्रिया यह निश्चय करना कठिन होते हुए भी आवश्यक है। किसी क्रिया के विरुद्ध प्रतिक्रिया तात्कालिक होती है, भावनावश होती है,तथा परिणामों को बिना सोचे होती है। जो प्रतिक्रिया तात्कालिक भावना में न होकर योजनापूर्वक सोच समझकर होती है वह प्रतिक्रिया होते हुए भी क्रिया में बदल जाती है। दूसरी बात यह भी है कि प्रतिक्रिया किसी संगठन के द्वारा नही होती बल्कि समूहगत होती है। यदि कोई संगठन प्रतिक्रिया करता है तो वह उसकी क्रिया मानी जाती है। गॉधी हत्या एक क्रिया थी। इतनी बड़ी घटना होने के बाद भी उस समय सम्पूर्ण भारत में कोई प्रतिक्रिया नही हुई। क्रिया की प्रतिक्रिया में यह देखना भी महत्वपूर्ण होता है कि क्रिया की प्रतिक्रिया कही क्रिया से भी अधिक नही हो रही है। बावरी मस्जिद एक निर्जीव प्रतीक था। बावरी का विध्वंश एक क्रिया थी। यदि उसी समय कुछ मुसलमान दो चार मंदिरों को आग लगा देते तो वह प्रतिक्रिया मानी जाती किन्तु उसके बाद बंम्बई का हत्याकांड सोच समझकर किया गया, संगठित गिरोह ने किया और इसलिए उसे क्रिया ही माना जायेगा। पंजाब में सिक्खों ने इंदिरा गॉधी की हत्या की। वह हत्या क्रिया थी और दो दिनों तक चला सिक्ख कत्लेआम प्रतिक्रिया। यदि एक सप्ताह के बाद किसी सिक्ख को गाली दी जाती और उसे इंदिरा गॉधी हत्या से जोडा जाता तो वह गाली क्रिया मानी जाती,प्रतिक्रिया नहीं। इसी तरह गुजरात में कार सेवकों की हत्या क्रिया थी और निर्दोष मुसलमानों का कत्लेआम प्रतिक्रिया। मुजफ्फरनगर में एक मुसलमान लड़के की हत्या क्रिया थी,क्रिया के विरुद्ध यदि लड़के का परिवार और मित्र मिलकर दोनों हत्यारों की हत्या कर देते तो वह प्रतिक्रिया थी किन्तु उस प्रतिक्रिया में आम मुसलमानों का शामिल होना क्रिया और प्रतिक्रिया के बीच का कार्य बन गया। हत्यारों को जेल से छुड़वाना क्रिया थी उसके बाद सभाएँ लेना भी क्रिया थी,और इतनी क्रियाओं के बाद कुछ सरकार का भी इशारा पाकर हिन्दुओं ने जो किया वह प्रतिक्रिया थी। इसी तरह चुनावों के समय संघ परिवार के लोगों ने मंदिर पर लाउड स्पीकर बजाने की जो पहल की वह पूरी तरह क्रिया थी और उसके बाद की घटना प्रतिक्रिया। किसी ने दादरी में गोमांस खाया। गोमांस खाने वाले की हत्या प्रतिक्रिया थी, क्रिया नहीं। यद्यपि गोमांस की बात झूठ निकली। फिर भी जो कुछ हुआ वह तात्कालिक और भावनात्मक था सोच समझकर नही।

एक प्रश्न यह जरुर उठता है कि क्रिया के विरुद्ध प्रतिक्रिया का स्वरुप क्या हो। यदि किसी ने किसी मंदिर में गाय कांटकर फेंक दी तो यह कार्य क्रिया के रुप में माना जायेगा। यदि किसी ने किसी धर्म ग्रंथ का अपमान कर दिया तो वह भी एक क्रिया है किन्तु विचारणीय यह भी है कि किसी निर्जीव क्रिया के विरुद्ध किसी मनुष्य की हत्या को किस सीमा तक प्रतिक्रिया माना जाये। मैं समझता हूँ कि ऐसी प्रतिक्रिया भी किसी तरह क्षम्य नही है। यदि ऐसी प्रतिक्रिया किसी संगठित गिरोह द्वारा की जाती है तो उसे प्रतिक्रिया के वजाय क्रिया कहना अधिक अच्छा रहेगा। यदि दादरी में गोमांस खाने की अफवाह को जान बूझकर संघ समर्पित गिरोहों ने अन्जाम दिया तो उसे क्रिया ही मानना चाहिए,प्रतिक्रिया नहीं। क्योंकि प्रतिक्रिया आम लोगों में होती है किसी गिरोह तक सीमित नही होती। संघ परिवार तो एक गिरोह है । वह जो भी करता है वह उसी तरह क्रिया होती है जिस तरह संगठित मुस्लिम गिरोहो द्वारा की गई कोई प्रतिक्रिया। मुझे याद है कि इंदिरा गॉधी की हत्या के समय भारत के आम लोगों में आम सिखो के विरूद्ध

आक्रोश था और गुजरात दंगों के समय भी आम नागरिकों में आम मुसलमानो के विरूद्ध आक्रोश था। किन्तु दादरी गोमांस प्रकरण में भारत के आम हिन्दुओं ने उस मुसलमान की हत्या का समर्थन नही किया। क्योकि वह कार्य एक गिरोह विशेष का था आम हिन्दुओं का नही। जबकि पंजाब सिख कत्लेआम या गुजरात मुसलमान कत्लेआम मे देश के आम लोग शामिल थे किसी गुट विशेष के नही। इसी तरह संघ परिवार के लोग एडीचोटी का जोर लगाकर गोहत्या,गोमांस के प्रश्न पर जो ध्रुर्वीकरण करना चाहते है उस ध्रुवीकरण को आम हिन्दुओं का समर्थन प्राप्त नही है। विहार चुनाव में यह बात और भी साफ हो गई है । इसका अर्थ हुआ कि क्रिया के विरुद्ध प्रतिक्रिया स्वाभाविक होती है, सर्वसमूह की होती है और यदि कोई गिरोह विशेष उस क्रिया के विरुद्ध प्रतिक्रिया का लाभ उठाना चाहता है तो उस गिरोह का कार्य क्रिया में बदल जाता है। यदि बर्मा में कुछ निर्दोष मुसलमानों की हत्या होती है और बदले में भारत में हिन्दुओं पर आक्रमण होता है तो यह भारत का आक्रमण बर्मा की प्रतिक्रिया न होकर एक गिरोह की क्रिया मानी जायेगी। अब भी संगठित गिरोह अपने उद्देश्य में सक्रिय हैं। कल ही मैंने टी बी पर एक बहस में एक समाजवादी मुसलमान की यह प्रतिक्रिया सुनी कि दलाई लामा ने हिन्दुओं को शांतिप्रियता का प्रमाण पत्र देकर ठीक नही किया। दलाई लामा को बर्मा में मुसलमानों की हत्या पर भी बोलना चाहिए था तब वे निष्पक्ष माने जाते। मुझे आश्चर्य हुआ कि फ्रांस की घटना पर चलती बहस में किसी मुसलमान द्वारा इस प्रकार की टिप्पणी करना कहीं आजमखान और मणिशंकर अय्यर जैसों की बुरी आदत का अनुकरण तो नही था । किन्तु परन्तु लगाकर आप बहस में तो बच सकते है किन्तु आम लोगों का विश्वास खो देते है।

फ्रांस में जो हुआ उसका प्रभाव दुनिया भर के मुसलमानों पर पडेगा। इस तरह की घटनाओं के बाद कुछ मुसलमानों को छोड़कर बाकी लोग संदेह के घेरे में रहेंगे। मैं देख रहा हूँ कि इस घटना के बाद मुसलमानों का बड़ा बहुमत आतंकवाद के विरुद्ध प्रतिक्रिया व्यक्त कर रहा है। जो लोग हर मामले में निरपेक्ष रहते है वे भी ठीक है लेकिन जो लोग बात बात पर अमेरिका के विरुद्ध बोलते है, कुरान की प्रति अपमानित होने पर जुलुस निकालते है, बर्मा में हत्या होने पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते है, वैसे लोग यदि फ्रांस की इस घटना के बाद भी चुप रहते है तो ऐसे लोगों का आचरण संदेह के घेरे में आयेगा, चाहे वे चुप ही क्यों न हो। या तो आप हर तरह से निरपेक्ष रहिये और यदि आप सक्रिय है तो आपकों न्याय के पक्ष में सक्रिय दिखना चाहिए। किसी गिरोह या संगठन के पक्ष में सक्रियता कई बार लाभ भी दे सकती है और कभी एक आध बार सूदव्याज समेत वसूल भी कर सकती है, जैसा अभी आजमखान और मणिशंकर अय्यर के साथ हुआ।

प्रश्नोत्तर

(1) श्री धर्मचंद मेहता, श्रीनाथ द्वारा राजस्थान, ज्ञानतत्व– 52734

प्रश्नः– आपका चिंतन है कि चार मुद्दो पर काम होना चाहिये। 1 व्यवस्था परिवर्तन, 2 संविधान को संसंद की जेल से बाहर निकालना, 3 सहभागी लोकतंत्र, 4 लोक संसद की अवधारणा। मैं सोचता हूँ कि ऐसा कार्य एकाएक होना बहुत मुश्किल और दुरुह है। आप यदि अपने आंदोलन को वाकई यथार्थ में बदलना चाहते हैं तो वर्तमान की राजनीतिक परिचर्चा को बंद कर पूरे भारत वर्ष में हर राज्य से 10–10 प्रतिनिधियों का चयन कर भारतीय सभ्यता संस्कृति के अनुकूल एक व्यवस्थित संविधान का निर्माण कर देश के सामने रखे, देखिए फिर एक क्रांति का सूत्रपात होगा क्योंकि आपके गहन ज्ञान से भारत में शैक्षिक चेतना तो आई है परन्तु कार्य का ठोस आधार हमारे समक्ष नहीं है।

रचनात्मक रुप से यह पहला कदम उठना चाहिए अन्यथा वर्तमान राजनीतिक परिप्रेक्ष्य की चर्चा करने से कुछ नहीं होगा।

(1)भारतीय जनतन्त्र कैसा हो?

(2)विभिन्न संस्कृतियों में तालमेल?

(3)विकास के चरण ?

(4)विश्व में एक शक्ति कैसे बने?

उदयपुर से प्रातःकाल पत्र निकलता है उसका ट्वीटर आप पढ़ेगे तो पायेंगे कि वह वर्तमान व्यवस्था के विषय मे गजब और सटीक कहता है।

उत्तरः– आपके सुझाव पर हम लोगों ने विचार किया। भारत की सभ्यता और संस्कृति को आधार बनाकर कुछ करने की दिशा हमारी नही है। हम तो विचार मंथन को आधार बनाकर विश्वस्तरीय असत्य को तर्क से चुनौती देने का प्रयास कर रहे है। कार्य मुश्किल और दुरूह है। यहॉ तक कि लगभग असंभव सरीखा है। किन्तु असंभव को संभव करना यदि संभव है तो उस कार्य को क्यों न करुँ। संभव को संभव करना तो वर्तमान समय में पूरी दुनिया में हो ही रहा है। मैं उस कार्य से भिन्न कुछ प्रयास कर रहा हूँ।

पिछले 20–30 वर्षों की कड़ी मेहनत ,विचार मंथन तथा करीब पचासों लाख रुपया खर्च होने के बाद देश भर के विद्वानों ने बैठकर भारत के प्रस्तावित संविधान का अंतिम प्रारुप 4 नवंम्बर 1999 को रामानुजगंज में प्रसारित किया था। उस संविधान के प्रयोग के तौर पर रामानुजगंज शहर में नगरपालिका अध्यक्ष का चुनाव जीत कर उस संविधान के आधार पर सफल व्यवस्था चलाई गई। मैं यह कह सकता हूँ कि वर्तमान समय में संविधान के जो भी प्रारुप प्रचलित हैं उन सब में सबसे कम दोष इस रामानुजगंज वाले संविधान में है। इस संविधान के प्रियंबुल को बदल कर उसमें पॉच बातें डाली गई है–(1)लोकस्वराज्य (2)अपराध नियंत्रण की गारण्टी(3)आर्थिक असमानता में कमी(4) श्रममुल्य वृद्धि (5) समान नागरिक संहिता। इन पॉचों मुद्दों को सामने रखकर विचार मंथन लगातार चल रहा है। इन्हीं पॉच बिन्दुओं को और संक्षिप्त करते हुए चार मुद्दो पर आंदोलन की योजना बनी है। वे चार मुद्दे है–(1) परिवार, गॉव, जिले को संवैधानिक अधिकार(2) लोकसंसद(3) राइट टू रिकाल (4) जीवन भत्ता। पहला मुददा सामाजिक सशक्तिकरण का है । दुसरा मुद्दा संवैधानिक है। तीसरा मुद्दा राज्य कमजोरीकरण का है। चौथा मुद्दा आर्थिक असमानता मे कमी तथा श्रम मुल्य वृद्धि का है। इन चारों पर हमारा संगठन सक्रिय है। आप 1999 में पारित संविधान का प्रारुप पढ़ें और सुझाव दें, कि आप क्या और कैसा संशोधन चाहते हैं। यदि संविधान की प्रति उपलब्ध न हो, तो या तो आप **kaashindia.com** में मैग्जिन खोलकर ज्ञानतत्व 235 से 237 तक पढ़ सकते है,या आप लिखेंगे तो हम उसकी प्रिंटेड कॉपी आपको पोस्ट से भेज देंगे।

(2)राहुल चिमन भाई मेहता,303,सुखधाम फ्लैट्स मुन्सिपल्टी मार्केट के सामने सी जी रोड नवरंगपुरा अहमदाबाद

प्रश्नः–हम रिकालिस्ट्स भारत में राईट टू रिकॉल प्रक्रियाओं को लागू करवाने के लिए प्रयासरत है, तथा इसी क्रम में भारत के नागरिको को इन प्रक्रियाओं के बारे में सूचित करके उनसे समर्थन का आग्रह करते है। यह हमारे लिए हर्ष का विषय है कि आप राईट टू रिकॉल कानूनों के समर्थक है तथा व्यवस्था परिवर्तन के विषय को गंभीरता से लेते है। इस प्रपत्र में प्रस्तावित राईट टू रिकॉल जिला शिक्षा अधिकारी का कानून ड्राफ्ट संलग्न किया गया है। आपसे आग्रह है कि इसका अध्ययन कर सम्मति प्रदान करें। यदि आप इस प्रस्तावित प्रक्रिया का समर्थन करते है तो आपसे निवेदन है कि निम्नांकित कानूनी ड्राफ्ट को अपनी पत्रिका में नीचे दर्ज किये गए संपर्क सूत्र के साथ प्रकाशित करें, ताकि सुधि पाठक इन प्रक्रियाओं के बारे में अधिक विवरण प्राप्त करने हेतु संपर्क कर सके।... राईट टू रिकॉल।

उत्तरः– आपका पत्र प्राप्त हुआ। आपने राईट टू रिकॉल की एक नई प्रणाली लिखी है। इस प्रणाली के अनुसार प्रत्येक जिले में एक या एक से अधिक जिला शिक्षा अधिकारी नियुक्त किये जायेंगे, जिन्हें जनता चुनेगी। आपका पूरा ड्राफ्ट लगभग दस पृष्ठो का है और मैंने पूरा पढ़ा। मैं यह नही समझ सका कि आपका प्रस्ताव राईट टू रिकॉल का है या व्यवस्था परिवर्तन का। मुझे तो लगा कि आपके सुझाव वर्तमान राजनैतिक व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन के है। आपसे फोन पर भी बात हुई फोन पर चर्चा के बाद भी मैं ज्यादा समझने में असमर्थ रहा। एक सप्ताह पहले दिल्ली मे हमारी टीम के साथियो के साथ बैठकर आपसे दिनभर प्रत्यक्ष चर्चा हुई। फिर भी हमारे साथी आपके ड्राफट मे यह नही समझ सके कि वह राइट टू रिकाल है या संपूर्ण व्यवस्था परिवर्तन । वह भी नई व्यवस्था के प्रारूप के रूप मे है। हम अभी नई व्यवस्था के किसी प्रारूप को लेकर कोई आंदोलन खडा करने की स्थिति मे नही है। फिर भी आपका सुझाव अच्छा है और हमलोगो ने तय किया है कि आप इस आधार पर आगे बढे और हम आपका साथ देंगे, किन्तु हम अपने आंदोलन के साथ आपके आंदोलन को जोडकर चलने की स्थिति मे नही हैं। अलग अलग प्रयत्न चलते रहेंगे और हम आप अपना काम करते हुए एक दूसरे की सहायता करते रहेंगे।

राईट टू रिकॉल के संबंध में कई संगठनों के कई अलग अलग सुझाव है हम समझते है कि हम सभी सुझाव प्रस्तावित आयोग के सामने रखेंगे। और आयोग सभी प्रस्ताव पर विचार करने के बाद जो निष्कर्ष निकालेगा उसे हम स्वीकार करेंगे। हमारा मानना है कि राईट टू रिकॉल तो होना ही चाहिए चाहे उस राईट टू रिकॉल की प्रणाली राहुल मेहता जी की हो अथवा किसी अन्य की अथवा कोई और भिन्न। आप अपनी दिशा में सक्रिय रहिये। हमारे मित्र भी राईट टू रिकॉल के लिए अपनी अपनी लाईन पर सक्रिय है। मैं आश्वस्त करता हूँ कि आप सब में से जिस लाईन को देश की जनता अधिक स्वीकार करेगी, उसके समर्थन में हम सब साथी खड़े नजर आयेंगे।

(5) सत्यपाल शर्मा, नवीनगर बरेली उत्तर प्रदेश ज्ञानतत्व –6894

चुनाव मे समर्थन हासिल करने के लिये सभी राजनैतिक दलो के नेता आरक्षण का समर्थन करते है।उच्च जाति के मतदाताओं को खुश करने के लिये नेता आर्थिक आधार पर आरक्षण देने की वकालत करते है। लेकिन इसे पूरा करने से मुकर जाते है। आरक्षण से देश का बहुत अहित हो रहा है। आरक्षण के कारण देश की प्रतिभाएं विदेश मे पलायन कर रही हैं जो दुर्भाग्यपूर्ण है। देश के दबे कुचले वर्ग को समर्थ बनाने के लिये संविधान निर्माताओं ने दस साल के लिये आरक्षण की व्यवस्था की थी जो राजनैतिक स्वार्थ की पूर्ति के लिये अब तक जारी है तथा जो अनुचित और प्राकृतिक न्याय सिद्धान्त के प्रतिकूल है। आरक्षण का आधार जातिगत न होकर आर्थिक होना चाहिये। किसी भी तिकडम से सत्ता हासिल करना सभी राजनैतिक दलो का प्रथम लक्ष्य है। इस पर विचार होना चाहिये कि आरक्षण की जरूरत किसे है? संविधान निर्माताओं ने जिस मकसद से 10 वर्ष के लिये आरक्षण की व्यवस्था की थी वह कितनी सफल रही। आरक्षण से राष्ट्र का कितना हित हो रहा है और कितना अहित इस पर बहस होनी चाहिये। । कृपया अपने निर्भीक ओजस्वी विचारो से अवगत कराने की कृपा करे ।

6 ओमप्रकाश, मंजुल पिलीभित उत्तर प्रदेश ज्ञानतत्व 6011

प्रश्नः—26 जनवरी 1950 को संविधान को लागू करते समय संविधान सभा,जिसके एक सदस्य बाबा साहब अम्बेडकर भी थे,की अनुशंसा पर भावी 10 वर्षो के लिए संसद व विधान मंडलों के चुनाव, शिक्षा व नौकरी के क्षेत्र में दलितो,शोषितों व पिछडों को आरक्षण देने की घोषणा की गयी,ताकि सामाजिक व आर्थिक स्तर पर ये अगड़ों की बराबरी कर सकें। इसके लिए इन जातियों को संविधान में 'अनुसूचित जाति' तथा कबीलों व खानाबदोशों को अनुसूचित जनजाति कहा गया। संविधान द्वारा इन्हें इनकी आबादी के अनुपात में क्रमशः 15 प्रतिशत तथा साढ़े सात प्रतिशत आरक्षण प्रदान किया गया। दुर्भाग्य की बात यह रही कि सन् 1950 से अगले 10 वर्षों के लिए प्रावधित आरक्षण आज तक खत्म नही हुआ,उल्टे विविध रुपों में व्यापक स्तर पर बढ़ता गया। सन् 1980—81 में इसे लेकर भीषण आन्दोलन हुए। तब अकेले अहमदाबाद,, मैं मेडिकल में प्रवेश को लेकर चले हंगामें में 42 छात्रों ने प्राण गंवाये थे। यहॉ 102 दिन तक आंदोलन चला था।यह आग धीरे—धीरे उ0प्र0 में भी आयी,फैली और अनेक प्रतिभाशालियों को निगल गयी। सन् 1990 में आरक्षण नीति की तब पराकाष्ठा ही हो गयी, जब केन्द्र में वी0पी0 सिंह की राष्ट्रीय मोर्चा सरकार ने 'अन्य पिछड़ी जाति' के नाम पर साढ़े सत्ताईस प्रतिशत का आरक्षण और बढ़ा दिया। इस समय केन्द्र में वी0 पी0 सिंह और उ0 प्र0 में मुलायम सिंह की सरकार थी। गुरु और चेला, इन दोनों ने ही होनहार सवर्णो का दमन किया। पूरे देश, विशेषतः उ0 प्र0 में जाने कितने सवर्ण प्रतिभाशाली पुलिस की गोली के शिकार हुए, जाने कितनों ने आत्म हत्या कर ली। सन् 1989 में आम चुनाव के बाद जब वी0 पी0 सिंह शरद यादव, मुलायम यादव,रामविलास पासवान के समर्थन से प्रधानमंत्री बने, तो इस चाण्डाल चौकडी ने वी0पी0 सिंह को मंडल आयोग की सारी सिफारिशें लागू करने के लिए विवश कर दिया। वी0 पी0 सिंह ने इन्हें स्वतंत्रता दिवस की पूर्व संध्या पर अति गोपनीयता व नाटकीयता के साथ घोषित कर दिया। हालॉकि वी0पी0 की इस कायराना,दगाबाज और अदूरदर्शी चाल से उनके राजनैतिक जीवन की भी मृत्यु हो गयी। वे सरकार तो नही चला पाये,मध्यावधि चुनाव में उनकी पार्टी व संपूर्ण राष्ट्रीय मोर्चा की करारी हार हुई। सन् 1993 में जब कांग्रेस की सरकार बनी,तो उसने आरक्षण विरोधी स्वरों, जिसके लिए कांग्रेस ही प्रारंभिक जिम्मेदार है को धीमा करने के लिए सामान्य जाति के निर्धनों के लिए भी 10 प्रतिशत आरक्षण देने की घोषणा की। हालॉकि इसे ऊॅट के मुॅह में जीरा जैसा भी नहीं कहा जा सकता। इतना ही नहीं, आंध्रप्रदेश,उ0प्र0,केरल आदि में मुस्लिमों को रिझाने के लिए वहॉ की सरकारों ने समय—समय पर मुस्लिमों को अलग से 10 प्रतिशत आरक्षण देने की घोषणाएॅ की, हरियाणा में जाटों को आरक्षण देने की घोषणा की गयी। इन्हें सर्वोच्च न्यायालय द्वारा असंवैधानिक करार देते हुए निरस्त कर दिया गया। विभिन्न प्रकार का आरक्षण लेने वाले आज सवर्णो से इतना आगे निकल चुके हैं और सवर्ण इनसे इतनी पनाह मान गये हैं कि सवर्णो की बहू—बेटियां इनके यहॉ आज चौका वर्तन करने के लिए विवश हैं। देश के 3—4 प्रांतों को छोड़कर आज देश में सभी प्रांतों के मुख्यमंत्री आरक्षित जाति के ही हैं। यहॉ तक कि प्रधानमंत्री भी आरक्षण वर्ग से ही है। राजस्थान के गुजरों,हरियाणा के जाटों,महाराष्ट्र के मराठों और अब गुजरात के पटेलों ने आरक्षण के लिए आन्दोलन किए है, जबकि इनके प्रांत में अधिकतर इनकी जाति का ही मुख्यमंत्री है या रहा है। आज तक जो आरक्षण की रेवडी चहेक रहे हैं उनमें मुलायम सिंह यादव, लालू प्रसाद, शरद यादव, अखिलेश यादव, नीतिश कुमार, मायावती, रामविलास पासवान, यहॉ तक की बिहार विधान सभा चुनावों के बीच आरक्षण को जारी रखने की घोषणा करने प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी और उपराष्ट्रपति हामिद अंसारी जैसे लोग एवं उनकी जाति व रिश्तेदारी के लोग आते है।(संविधान द्वारा अंसारी,सिद्धीकी,मंसूरी आदि पिछड़े मुसलमानों को भी आरक्षण की सुविधा प्रदत्त है।) हार्दिक पटेल ने स्वजाति के आरक्षण के लिए इतनी उग्रता का प्रदर्शन किया कि विपुल देसाई द्वारा आत्महत्या किए जाने पर यह संविधान विरोधी भाषण भी दे डाला कि पटेलों को आत्महत्या करने के बजाय 2:4 पुलिस वालो की हत्या करनी चाहिए। हार्दिक ने यदि निर्धनों को आरक्षण दिलाने या आरक्षण को समूल खत्म करने के लिए अभियान छेड़ा होता,तो आज उनकी छवि देश के नायक की बनी होती,जो उल्टी बन चुकी है। अंदाजा लगाया जा सकता है,ये समर्थ व समृद्ध जातियॉ आरक्षण का लाभ लेकर क्या शेष जातियों का गला घोटना चाहती है।

हार्दिक द्वारा शुरु किये गये आंदोलन ने फौरी तौर पर आरक्षण की आग को हवा अवश्य दी है, पर यह एक अपरिपक्व मस्तिष्क व भावुक हृदय का असूझ–अबूझ प्रयास होने के कारण भ्रांति एवं अंधकार से युक्त है। पटेलों को आरक्षण दिया जाना भी कम कठिन काम नही है। इस समय उ0प्र0 में पंचायती चुनाव चल रहे हैं। आरक्षण का लाभ लेने के लिए सरकारी मशीनरी से घाल मेल कर सैकडों लोगों ने अपनी जातियॉ बदल ली हैं। कइयों ने महिला आरक्षण का लाभ लेने के लिए रातो रात अपने बेटों का ब्याह कर पुत्र–वधुओं का नामांकन करा दिया है। आज कई जातियों ने अपने पूवर्जो को बदल डाला है। गुजरात व महाराष्ट्र के पाटीदार गूजर अपने को असली पटेल बताते हैं,तो उ0 प्र0 के कुर्मी अपने को पटेल कहते हैं। बिहार के कुर्मी अपने नाम के आगे सिन्हा लिखते हैं, जबकि उ0प्र0 में कायस्थ सिन्हा का प्रयोग करते हैं। उ0प्र0 के कुमिर्यो में भी अनेक उपजातियॉ हैं। अस्तु,पटेलों को आरक्षण देने से पूर्व पटेल की संवैधानिक परिभाषा करनी पडेगी,जो असंभव नहीं,तो जटिल व दुरुह कार्य अवश्य है। यह आन्दोलन अपनी ही मौत मर जायेगा,क्योंकि जो जाति इतनी समर्थ हो कि राज्य में उसी का मुख्यमंत्री हो, उसे राष्ट्र का समर्थन नहीं मिल सकता। भले ही उसकी संख्या कितने ही करोड़ हो। देश की अरबों की संख्या के समक्ष करोड़ कहीं नही ठहर सकते। फिर आज के राज्य कल्याणकारी राज्य हैं, प्राचीन काल के सामंती राज नहीं। यदि सर्वसम्पन्न आरक्षित वर्ग के द्वारा ही अनुचित एवं अधिकृत रुप से राष्ट्र की सारी सुविधाऍ हड़प ली जायेंगी तो शेष जातियॉ क्या नाद के नीचे दबा दी जायेगी। यह कहॉ का न्याय है दो भूखे लोगों में एक को रोटी इसलिए दे दी जाये कि वह पिछड़ा है और दूसरें को इसलिए भूखों मार दिया जाये कि वह अगड़ा है। जवान बेटी के बाप की चिंताऍ एक जैसी ही होती है, भले ही वह किसी जाति का हो।

डेंगू, चिकनगुनिया ,इन्सेफलाइटिस और फ्लू जैसी आधुनिक शारीरिक महामारियों की भांति आरक्षण एक अर्वाचीन राजनीति से ग्रस्त संवैधानिक महामारी है। आरक्षण सवर्णो की क्षमता व प्रतिभा को मारता है। उन्हें पूर्व ज्ञात होता है कि वे अपने कौशल में कितनी भी वृद्धि कर लें,पर मौका रिजर्व को ही मिलेगा। सो वे कौशल विकास का प्रयास ही छोड़ देते हैं। उधर रिजर्व वर्ग के लिए भी आरक्षण धीमा जहर और बैसाखी है, जो शनैःशनैः उनकी प्रतिभा को कुतरता हुआ अतंतः उसे खत्म ही कर देता है। आज देश में व्याप्त गुंडागर्दी,तथा अराजकता के पीछे मुख्य कारण यही है कि शुरु से शासन करने वाला रक्त जिनकी रंगों में बहता आया, वे घास छील रहे हैं और जिनमें कभी भी प्रशासनिक क्षमता व योग्यता नही रहीं, वे प्रशासन में प्रविष्ट करा दिये गये हैं। देश की सामान्य जातियों में प्रतिभा पलायन के पीछे भी मुख्य कारण आरक्षण की नीति ही है। देश में रह कर सड़क नापने वाला सामान्य श्रेणी का प्रतिभाशाली युवक विदेश में जाकर नामा भी कमाता है नाम भी।

आरक्षण की आड़ में आरक्षितों के द्वारा अनारक्षितों ने संविधान के कोडों से वह मार खायी है कि आज उनका शरीर ही नही आत्मा भी लहूलुहान है। ब्राहमण , वैश्य और क्षत्रिय को इनके द्वारा खुले आम पंडिता बनेटा और ठकुट्टा कहा जाना इनका विशेषाधिकार बन चुका है। सवर्णो ने यदि भूल कर भी इन्हें चमट्टा धुबेटा या मंगेटा कह दिया, तो उनके लिए सीधी कोतवाली और जेल बनी हुई है।

65 वर्षो के आरक्षण ने समाज को बिल्कुल उलट कर रख दिया है। आज वास्तव में आरक्षण के पात्र सवर्ण हैं। आरक्षण समानता के अधिकार को कितने अन्याय के साथ खत्म करता है कि एक साथ नियुक्त एक सामान्य परस्नातक तथा हरिजन हाई स्कूल में से अगले 10 वर्षो में हरिजन अन्याय पूर्ण आरक्षण से प्रोन्नत होकर सवर्ण का बॉस बन बैठा है। इस दुख को केवल भुक्त भोगी ही अहसास कर सकता है। सरकारी नौकरियों को ऐश और कैश का बजरबट्टू समझने के कारण इन नौकरियों का आकर्षण भी आरक्षण को हवा देता है। सरकार को चाहिए कि एक ओर सरकारी सभाओं में अधिकाधिक अवसर निर्मित करे तथा दूसरी ओर समय समय पर इनकी शर्तो को कठोर और सुविधाओं को कम करके इनके बढ़ते हुए भाव को रोके। सरकारी नौकरियों के प्रति असीम रुझान को इस तथ्य से आंका जा सकता है कि सितंबर 2015 में उ0 प्र0 सचिवालय में 365, चपरासियों के पदो ंके लिए करीब पौने तीन लाख आवेदन आये थे। इनमें उच्च शिक्षा प्राप्त थे।

आरक्षण के पक्ष में प्रायः एक असत्य बात यह भी कही जाती है कि दलितों की दुर्दशा सवर्णो के द्वारा की गयी। यह पूर्ण सच नही है। निम्न वर्ग के लोग इसके लिए अधिकांशतः स्वयं जिम्मेदार हैं। हर कोई उच्च वर्ग के साथ बैठकर खाना चाहता है, नीचे के साथ नहीं। बढ़ई ब्राहमण के साथ तो खा सकता है, धोबी के साथ नहीं। धोबी बढ़ई के साथ तो खा सकता है, चमार के साथ नही और चमार धोबी के साथ तो खा सकता है,पर भंगी के साथ नही । इन लोगों से पूछिए फिर अन्याय का आरोप सवर्णो के सिर पर ही क्यों मढ़ते है? सवर्ण की बस इतनी गलती है कि उसका उच्च जाति में जन्म हो गया। प्राचीन काल में निर्मित वर्ण व्यवस्था न अनुचित थी, न अव्यवस्थित थी और न अवैज्ञानिक थी। इसे गुण,कर्म स्वभाव के अनुसार क्रमानुसार 4 वर्गो में विभक्त किया गया था और गुण कर्म स्वभाव में परिर्वतन होते रहने से आचरण की उच्चता या पतन की स्थिति में वर्णो में परिवर्तन होता रहता था। विश्वामित्र का क्षत्रिय से ब्राहमण बनना और ऐतरेय का शूद्र से ब्राहमण बन जाना ज्वलंत उदाहरण हैं। इस बात की पुष्टि के लिए शास्त्रों में भी कहा गया है। जन्मनः जायते शूद्रः संस्कारात द्विज उच्यते। निम्न जाति के लोग सवर्णो पर दोष रोपण तो कर सकते है, पर उनकी यह प्रशंसा कभी नहीं कर सकते कि हरिजन और दलित उत्थान का कार्य करने वाले, गॉधी विनोबा,राज गोपालाचार्य, राजाराममोहन राय, दयानंद, विवेकानंद, रविद्रनाथ ठाकुर, रामकृष्ण परमहंस,तिलक

महात्मा बुद्ध, महामना मालवीय, केशवबलिराम हेडगेवार, रामतीर्थ, श्रीराम शर्मा आचार्य , श्रद्धानंद, लाहिड़ी महाशय, टैलंग स्वामी, योगानंद आदि सभी ब्राहमण ही थे।

पंचायती राज स्थापनार्थ महिलाओं के आरक्षण से लिंग भेद भी बढा है और व्यभिचार भी। चुनाव लड़ने से लेकर सरकारी गैर सरकारी मीटिंगों तक घूंघट की रक्षा के लिए मूँछों को छाया की तरह घूंघट के साथ रहना पड़ता है। तब भी सावधानी हटी दुर्घटना घटी चरितार्थ हो जाया करती है। एक व्यक्ति के कार्य को दो व्यक्ति कर ले देश के कितने कार्य घंटे बर्बाद करते है? अच्छा होता प्रशासन का भार पुरुष के ही कंधो पर रहता। यूँ भी महिला आरक्षण के पीछे यही अवधारणा है कि पत्नी पति में विश्वास या सहमति नहीं रखती। जिन दंम्पत्तियों में सहमति नहीं है, वे अपने मतदाता का क्या कल्याण कर सकते हैं, सोचा जा सकता है। अस्तु, भविष्य में महिला आरक्षण के प्रति पुरुष आक्रोश बढ़ सकता है।

आरक्षण इसलिए भी तार्किक है कि एक ओर सरकार जातिवाद खत्म करना चाहती है,दूसरी ओर आरक्षण को जाति पर आधारित करके जातिवाद को बढ़ा भी रही है। यह तो ऐसा ही है जैसे ट्रेन एक ही है, पर वह समय पर और एक साथ ही बरेली से हरदोई को भी जा रही है और हरिद्वार को भी।

आरक्षण के मामले में सवर्णो के डुप्लीकेट बढ़ई, लोहार, लुनिया बंजारा , मुर्जी , दर्जी, नाई आदि भी सवर्णो की प्रगति में कम घातक नहीं हैं। ये जातियॉ समाज में कृत्रिम सम्मान पाने के लिए अपने नाम के आगे शान के साथ 'शर्मा, मिश्रा, चौहान, लवाना क्षत्रिय गुप्ता, सक्सेना, श्रीवास्तव आदि लगाती हैं और दूसरी ओर अपनी असली जाति की दुहाई देकर आरक्षण का लाभ भी ले रही है। हमारे पीलीभित के कुछ समृद्ध और आडंबरी बढ़ई और लोहार तो अब अपने नाम से पूर्व धड़ल्ले के साथ पंडित भी लिखने लगे हैं। जैसे पं0 अमुक दयाल शर्मा पं0 अमुक दयाल मिश्रा आदि। सवर्णो को इनसे पूछना चाहिए कि ये सवर्ण बन कर आरक्षण कालाभ क्यों ले रहे हैं? और आरक्षण का लाभ ले रहे है, तो समाज में सवर्ण होने की भ्रांति क्यों फैला रहे हैं?

ऐसा नही है कि जात्याधारित आरक्षण के खतरे से पूर्व आगाह न किया गया हो। सर्वप्रथम तो इसकी घोषणा के समय बाबा साहब अम्बेडकर ने ही दलितों को चेताया था कि आरक्षण उनके विकास हेतु मात्र 10 वर्ष के लिए प्रदान किया जा रहा है, वे इसे अपनी बपौती न समझें। सन् 1953 में केन्द्र द्वारा नियुक्त पहले आयोग, कालेलकर आयोग सन् 1969 में तमिलनाडु के पिछडा वर्ग आयोग तथा सन् 1983 में गुजरात के राणे आयोग आदि ने जाति के बजाय आरक्षण के लिए आर्थिक आधार की सिफारिश की थी, पर सरकार ने वोटों के लालच में इन सिफारिशों को नहीं माना । सन् 1970 में बदायूँ के एक कार्यक्रम में कांग्रेस के दिग्गज दलित नेता,जगजीवन राम ने भी सार्वजनिक तौर पर कहा था कि हरिजन भाई कान खोल कर सुन लें कि हमेशा आरक्षण पाते रहना उनका जन्म सिद्ध अधिकार नही है। आज कोढ में खाज की भांति आरक्षण की स्थिति और भी अधिक जटिल व भयावह बन चुकी है। ऐसे समय में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के प्रमुख मोहन भागवत के द्वारा बार बार आरक्षण की समीक्षा किए जाने की बात कहना नितांत सही है। इसके लिए जनमत संग्रह भी कराया जा सकता है। आज की तिथि में न यह सामयिक व न्यायोचित है न वैधानिक व व्यावहारिक ही। आरक्षण का आधार एक मात्र आर्थिक हो या ऑख मूँद कर सभी प्रकार का आरक्षण एक दम खत्म कर दिया जाये। सरकार किसी की भी रहे, अब भी चेतने व संभलने के लिए समय है, अन्यथा देश के सवर्णो ने स्वरक्षार्थ एक साथ खडे होकर आरक्षण रुपी कैंसर ,दैत्य या शत्रु से निपटने के लिए बिगुल बजा दिया, तो देश को संभालना कठिन हो जायेगा। सवर्णों की धमनियों में अब भी ओजस्वी,तेजस्वी पूर्वजों का रक्त प्रवाहित हो रहा है तथा उनकी कोशिकाओं में उन्हीं का डी.एन.ए सुरक्षित है। हाल ही अक्टूबर 2015 में रसायन के लिए संयुक्त रुप से नोबेल पुरुस्कार के विजेता पॉल मॉड्रिच अजीज संकार तथा टामस लिडाल का कहना है कि लाखों सालों तक भी आदमी की मूल पहचान नही बदली है, न आगे बदल सकती है। कोशिकाओं में एक मॉलीक्यूलर सिस्टम लगातार डी.एन.ए की निगरानी और मरम्मत करता रहता है, जिस कारण अनुवांशिक तत्व कभी विखंडित नहीं होता।

अलबत्ता देश की सर्वोचच न्यायपालिका ने समय समय पर चिंता करते हुए तरह तरह के असंवैधानिक आरक्षणों को खारिज करते हुए स्तुत्य कार्य किया है। सामान्य वर्ग को न्यायपालिका के प्रति आभारी भी होना चाहिए तथा भविष्य में भी उससे आशा रखनी चाहिए।

उत्तरः—मैंने पिछले लेख में भागवत चर्चा के समय आरक्षण पर विस्तृत विचार दिये थे, और मैं आपके पत्र को छापना या उत्तर देना उचित नही समझता था। किन्तु आपने कई बार फोन करके तथा दबाव डालकर मुझे उत्तर देने के लिए विवश किया । आपके पत्र की भाषा मुझे अच्छी नहीं लगी। आपने मुलायम सिंह, शरद यादव आदि को चंडाल चौकड़ी लिखा,अथवा वि.पी. सिंह को कायराना,दगाबाज, अदूरदर्शी लिखा। मेरे विचार में यदि ये शब्द नहीं होते तब भी अर्थ में कोई फर्क नही पड़ता।

आपने सवर्णो की बहु बेटियों की चिंता की, अवर्णो की बहु बेटियों की नहीं। जबकि आज भी अवर्णो के घरों में सवर्णों की बहुबेटियों की नौकरानी के रुप में काम करने की संख्या एक दो प्रतिशत ही है। अन्यथा अवर्णो की बहु बेटियों की संख्या 98 तक हो सकती है। स्वाभाविक भी है कि यदि सम्पूर्ण आबादी में एक दो प्रतिशत ही अवर्ण श्रम खरीदने की क्षमता रखते है तो यह प्रतिशत ही संभव है। इस तरह प्रतिशत में आंशिक बदलाव एक अच्छा लक्षण है जिसे आपने बुरा लक्षण बताने की कोशिश की है।

आपने हार्दिक पटेल का सन्दर्भ देकर लिखा कि यदि उन्होने पटलों को आरक्षण देने की मॉग न उठाकर आरक्षण को समूल नष्ट करने का अभियान छेडा होता तो वे नायक बन गये होते। मैं नही समझता कि आपने यह अभियान लम्बे समय से छेड रखा है किन्तु आप अभी तक नायक नही बन पाये । नायक बनने के लिए वर्ग विद्वेश फैलाना तात्कालिक लाभ भले ही दे किन्तु दीर्घकालीन नुकसान करता है। हार्दिक के साथ भी वही हुआ और किसी अन्य के साथ भी वही होगा भले ही समय कुछ कम ज्यादा लगे। आपने दो भूखों की रोटी का उदाहरण दिया तो यह उदाहरण तो आपके विपरीत जाता है। दो जातियों के समूहों में से किसी एक को अगड़ा कहकर सारी सुविधाएँ दे दी जाये और दूसरे को पिछडा कहकर भूखों मरने दिया जाये यह उचित नहीं। जवान बेटी के बाप की चिन्तायें एक समान होती है भले ही वह अगडा हो या पिछडा।

आपने देश में व्याप्त गुन्डागर्दी का कारण आरक्षण बताया कि जिनकी रगों में शुरु से शासन करने वाला रक्त बहता आया है वे यदि आज घास छील रहे है तो परिणाम खराब होंगे ही। आपने प्रतिभा पलायन के लिए भी आरक्षण को जिम्मेदार माना। आपने यह भी लिखा कि सवर्णो की धमनियों में अपने ओजस्वी, तेजस्वी तथा वर्चस्वी पूवर्जो का रक्त प्रवाहित हो रहा है तथा उनकी कोशिकाओं में उन्हीं का डी.एन.ए सुरक्षित है। मैं डी.एन.ए वाली बात को नहीं समझा। व्यक्ति के जन्म पूर्व के संस्कारों का प्रभाव आंशिक होता है तथा पारिवारिक ,सामाजिक, वातावरण का बहुत अधिक। हजारों वर्षो से कुछ सवर्णो ने जन्मना जाति का आरक्षण थोप कर अनेक जातियों को प्रतिस्पर्धा से बाहर कर दिया था। स्वाभाविक था कि लम्बे समय तक अच्छा पारिवारिक वातावरण मिलने के कारण वे अन्यों की अपेक्षा अधिक योग्य सिद्ध होते गये। आज भी भले ही जगजीवन राम, राम विलास पासवान आदि का रक्त अवर्ण ही क्यों न रहा हो किन्तु उनके सुधरे वातावरण में उनके बच्चों में योग्यता अधिक आ गई। यदि आज भी सवर्ण अन्य लोगों की अपेक्षा अधिक योग्य है तो उसका कारण पुराने जमाने में थोपा गया आरक्षण ही था अन्य कुछ नहीं। डॉ0 अम्बेडकर के शरीर में किसका रक्त था यह मैं नही कह सकता किन्तु उन्हे यदि कोई अच्छे परिवार का पारिवारिक वातावरण मिला तो वे बड़े बड़े सवर्णो से भी आगे निकल गये। आप यह नही कह सकते कि किसके डी.एन.ए में सवर्ण रक्त है और किसके में अवर्ण। यदि तीन चार सौ वर्षो के डी.एन.ए से तुलना की जाये तो कोई ऐसा व्यक्ति नही मिलेगा जिसके डी.एन.ए में और रक्त में बदलाव न हुआ हो। डी.एन.ए माता और पिता के संयोग से बनता है। माता के गर्भ से जन्म लेने वाले बच्चे की पहचान मॉ के नाम से तो संभव है किन्तु पिता कुल में लम्बे समय में कहीं न कही हेर फेर हो जाता है। आज भी 10–15 प्रतिशत सवर्ण महिलाएँ अवर्ण नौकरों से संबंध बनाती है, और उसी तरह 15–20 प्रतिशत सवर्ण पुरुष भी अवर्ण महिलाओं से गुप्त संबंध बनाते है। इनसे पैदा संतान का वर्ण तो विपरीत बन जाता है किन्तु उनका वास्तविक गुण भिन्न रहता है। 5–7 पीढ़ियों में यदि एक भी यह व्यवधान आया तो आगे की क्या गारण्टी है। भगवान राम दशरथ के पुत्र थे। उनके भी पीढियों के डी.एन.ए की कोई अंतिम गारण्टी नही दी जा सकती तो सामान्य व्यक्ति का कई–कई पूर्व पीढ़ियों का डी.एन.ए बनाना एक अनावश्यक कसरत है। मैं समझता हूँ कि हमें इस विवाद में नही पडना चाहिए। फिर दूसरी बात यह भी है कि जब जन्मनाजायते शूद्रं संस्कारात द्विज उच्यते को आदर्श माना गया है तो संभव है कि एक ही परिवार में एक ही माता पिता के अलग अलग बच्चों का वर्ण अलग अलग हो जाये। यदि परिवार का एक बच्चा ब्राहमण बना और एक शूद्र तो कैसे भविष्य में रक्त का आकलन करेंगे। पुराने जमाने में अनेक लोगों के क्षमतानुसार वर्ण बदलते भी रहे है जिसे आपने माना भी है तो फिर पूर्वजों के वर्ण मृत्यु तक और अगली पीढी तक कैसे स्थिर रह सकते है। यदि कुल मिलाकर 67 वर्षो में डेढ़ प्रतिशत ही अवर्ण आरक्षण का लाभ उठाकर सवर्णो को पीछे ढकेलने में सफल रहे तो क्या ऐसे सवर्णो के द्वारा देश छोडकर बाहर जाना कोई अच्छा कदम या ऐसी मजबूरी मानी जायेगी जो इन्हें गद्दार न कह सके।

आपने पंण्डिता और चमट्टा शब्द लिखे। मेरा अनुभव है कि आज भी पंण्डिता या चटुकट्टा शब्द उपयोग करने वाले अवर्ण बदमाशों की संख्या एक दो प्रतिशत से अधिक नही है। किन्तु चमरा कहने वाले धुर्त सवर्णो की संख्या 98 प्रतिशत है। भले ही इनके लिए कोतवाली और जेल का डर क्यों न जुड़ा हो।

यदि अवर्णो ने अपने नाम के आगे ब्राहमण लगा दिया तो आपको इससे क्यों कष्ट होना चाहिए। क्या ब्राहमण शब्द उन मुर्खो का भी एकाधिकार है जो शूद्र से भी कम योग्यता रखते है। जब गुण कर्म स्वभाव के अनुसार वर्ण बनते थे तब उन्हें जन्म के आधार पर जोडने की धुर्तता पूर्व में सवर्णो के द्वारा की गई या अवर्णो के। जन्म से जाति आरक्षित करने का पाप किसने किया अवर्णो ने या सवर्णो ने। कई हजार वर्षो तक आपने जन्म अनुसार जाति का आरक्षण लेकर उसका लाभ उठाया। 67 वर्षो में ही आप इतनी हाय तोबा करने लगे यह समझ में नहीं आया। गॉधी, विनोबा आदि महापुरुर्षो की पैदा करने की ठेकेदारी सिर्फ ब्राहमणों के पास ही है। यह ठेकेदारी अब्राहमण माताओं के पास क्यों नही होने चाहिए। सारे महापुरुष पैदा करने का काम तो आपने ले ही लिया है किन्तु यदि नौकरी जैसा शूद्र काम अवर्णों के लिए शत्– प्रतिशत भी आरक्षित कर दिया जाये तो न्याय ही होगा, अन्याय नहीं।

आपने आरक्षण का विरोध करने मे जितनी मेहनत की यदि उतनी मेहनत समान नागरिक संहिता के समर्थन मे लगा देते तो शायद अधिक अच्छा होता। समान नागरिक संहिता लागू होते ही सब प्रकार के आरक्षण समाप्त हो जायेगे। यहां तक कि हिन्दू कोड बिल सरीखा विभेद कारी कानून भी बेमौत मर जायेगा। इसका अर्थ हुआ कि आपका पूरा उद्देश्य पूरा हो जायेगा और आपकी नीयत पर भी कोई प्रश्न नही उठेगा। किसी स्पष्ट

उद्देश्य के लिये यदि नकारात्मक और सकारात्मक तरीके समान रूप से प्रभावी हो तो सकारात्मक मार्ग खोजना चाहिये। आपने आर्थिक आधार पर आरक्षण की बात की। यदि आर्थिक आधार पर आरक्षण दिया जाये और कोई व्यक्ति नौकरी पाते तक या विधायक बनते तक गरीब बना रहे और आरक्षण का लाभ मिलने के बाद सम्पन्न हो जाये तो उस व्यक्ति का आरक्षण से प्राप्त लाभ कैसे वापस होगा? यदि आर्थिक आधार पर आरक्षण देने की अपेक्षा एक सीमा रेखा से नीचे आर्थिक आधार के व्यक्तियों को समान रूप से दो हजार मूल रूपया मासिक जीवन भत्ता देने का समर्थन किया जाये तो दोनो मांगो के परिणामो मे क्या अंतर है। अंतर है तो सिर्फ एक कि एक मांग नकारात्मक तरीके से है और दुसरी सकारात्मक तरीके से ।

मैं किसी भी प्रकार के आरक्षण के पूरी तरह विरुद्ध हूँ। चाहे वह आरक्षण स्वतंत्रता के हजारों वर्ष पूर्व ही था अथवा स्वतंत्रता के बाद के 67 वर्षो में। आरक्षण हमेशा ही धुर्तता का हथियार होता है। यह हथियार पूर्व में किसी अन्य समूह के पास था और वर्तमान में किसी अन्य समूह के पास। जिस के पास पहले आरक्षण का हथियार था वे अब भी उसी तरह का लाभ उठाना चाहते है, जो गलत है। आरक्षण समाप्त करने के पहले इस बात की व्यवस्था करनी होगी कि स्वतंत्रता के पूर्व आरक्षण का लाभ प्राप्त करने वाले लोग अब उस लाभ का दुरुपयोग न कर सकें। प्राचीन समय से ही श्रमजीवी को शुद्र कहॉ जाता था और बुद्धिजीवी को द्विज। उस समय शुद्र और द्विज की पहचान गुण, कर्म, स्वभाव से होती थी, जन्म से नहीं, बाद में शुद्र या श्रमिक को नीचे स्तर का माना गया, जो एक समस्या बना। आज भी यदि हम नये ढंग से दो वर्ग बनाये एक श्रमिक,दूसरा बुद्धिजीवी। इन दो वर्गो में आज धीरे धीरे जो अन्तर बढ़ाया गया है और बुद्धिजीवियों का वेतन सुविधाएँ सम्मान और श्रमजीवियों को बहुत नीचे गिराया गया है यह घातक है । यह वेतन वृद्धि भी सीमा से बाहर जा रही है और इस वेतन वृद्धि में भी सवर्णो या बुद्धिजीवियों का ही अधिक योगदान है। श्रम और बुद्धि के बीच का अंतर कम करने के प्रयासों के बाद यदि आरक्षण समाप्ति की आवाज उठती है तो मैं उस आवाज का स्वागत करुँगा। समर्थन करुँगा। किन्तु यदि धुर्त लोग बिना कोई विकल्प दिये आरक्षण समाप्ति की आवाज उठाते है तो ऐसे धुर्तो के षड़यंत्र के विरुद्ध मेरी आवाज उठती रहेगी। मैं नही चाहता था कि अपने मन की बात कठोर शब्दों में व्यक्त करुँ। किन्तु यह आरक्षण समाप्त करने की आवाज कैंसर की तरह बीमारी का रुप ले रही है। इसलिए मुझे सावधान करना उचित लगा। मैं किसी अन्जान साथी को ऐसी कठोर भाषा में संदेश नही दे सकता था इसलिए मैंने आप जैसे अपने निकट के मित्र और प्रशंसक को इसका माध्यम चुना।

उत्तरार्ध

नोट– ज्ञान तत्व की सदस्य संख्या अब तक पांच अंको मे जाती रही है। अब नई व्यवस्था के अनुसार यह संख्या छः अंको मे की जा रही है। प्रारंभ के तीन अंक प्रत्येक जिले के लिये निश्चित है। चौथा अंक विकाश खंड या शहर के लिये है। अंत के दो अंक आपकी पाठक संख्या के अनुसार है। इस तरह सभी पुराने अंको के प्रारंभिक चार अंको मे बदलाव किया गया है।